छह

शिक्षा देने की सेवकाई

The Ministry of Teaching

इस अध्याय में हम शिक्षण की सेवकाई के अधिकांश पहलुओं पर विचार करेंगे। शिक्षण प्रेरितों, भविष्यद्वक्ताओं, प्रचारकों[26], पास्टरों / प्राचीनों / निरीक्षकों, शिक्षकों (बेशक) के साथ-साथ कुछ मात्रा में मसीह के सभी अनुयायियों का उत्तरदायित्व है, जैसा कि हमसे शिष्य बनाने, अपने सभी शिष्यों को मसीह की आज्ञाओं का पालन[27] करने की शिक्षा देने की अपेक्षा की गई है।

जैसा मैंने पहले भी इस पर बल दिया है कि शिष्य निर्माण करनेवाले पास्टर या सेवक को सबसे पहले अपने उदाहरण से सिखाना है और उसके बाद मौखिक रूप में। *वह उसी का प्रचार करता है जिस पर वह अभ्यास करता है।* प्रेरित पौलुस जो एक सफल शिष्य निर्माता था, उसने लिखा:

> तुम मेरी सी चाल चलो जैसा मैं मसीह की सी चाल चलता हूं (1 कुरि. 11:1)।

यही प्रत्येक सेवक का लक्ष्य होना चाहिए–अपना अनुसरण करने वालों से ईमानदारी के साथ यह कहने के योग्य होना, ''मेरे समान कार्य करो। यदि तुम यह जानना चाहते हो कि मसीह के अनुयायी को कैसा जीवन जीना चाहिए, तो मेरी ओर देखो।''

तुलना करने पर, मुझे अपनी पहले की मण्डली से कहे शब्द याद आते हैं जिनके बीच मैं पास्टर के रूप में कार्य करता था, ''मेरा अनुसरण मत करो... मसीह का अनुसरण करो!'' मैं यह स्वीकार कर रहा था कि अनुसरण करने योग्य मैं एक अच्छा

26. प्रचारकों द्वारा सुसमाचार का प्रचार किये जाने को शिक्षा के एक रूप में माना जा सकता है, और प्रचारकों को निश्चय ही एक सही बाइबल के सुसमाचार को बताने की ज़रूरत है।

27. सभी विश्वासियों को सार्वजनिक रूप में लोगों को सिखाने का उत्तरदायित्व नहीं दिया गया है, लेकिन सभी के पास शिष्य बनाने पर एक-एक आधार पर शिक्षा देने का दायित्व है (देखें मत्ती 5:19; 28:19-20; कुलु. 3:16; इब्रा. 5:12)।

उदाहरण नहीं हूं। वास्तव में, मैं यह स्वीकार कर रहा था कि मैं वैसे मसीह का अनुसरण नहीं कर रहा था जैसे मुझे करना चाहिए था और उसके बाद मैं लोगों से वह करने को कह रहा था जो मैं स्वयं नहीं कर रहा था। यह पौलुस के कहे गए शब्दों से कितना भिन्न था। सच में, यदि हम लोगों को अपना अनुसरण करने को नहीं कह सकते क्योंकि हम मसीह का अनुसरण नहीं कर रहे हैं, तो हमें सेवकाई में नहीं होना चाहिए, क्योंकि लोग प्रभु के सेवकों का प्रयोग अपने आदर्शों के रूप में करते हैं। *कलीसिया अपने अगुवों का प्रतिबिम्ब है।*

उदाहरण द्वारा एकता की शिक्षा देना
Teaching Unity by Example

एक विशिष्ट विषय पर–एकता के विषय पर सिखाने के लिए आइये उदाहरण द्वारा शिक्षा देने की धारणा पर कार्य करें। सभी पास्टर/प्राचीन/निरीक्षक यह चाहते हैं कि जिस झुण्ड का वे नेतृत्व करते हैं वह एकता में रहे। उन्हें स्थानीय अंगों में विभाजन पसंद नहीं है। वे जानते हैं कि विभाजन प्रभु को अच्छे नहीं लगते। यीशु ने भी हमें एक दूसरे से उसी तरह से प्रेम करने की आज्ञा दी है जिस तरह से उसने हम से प्रेम किया (देखें यूहन्ना 13:34-35)। एक दूसरे के प्रति हमारा प्रेम ही संसार के समक्ष हमें उसके शिष्यों के रूप में प्रगट करता है। इसी कारण, झुण्ड के अधिकांश अगुवे अपनी भेड़ों को एक दूसरे से प्रेम करने तथा एकता बनाए रखने का प्रयास करने का उपदेश देते हैं।

तौभी, वे सेवक जिन्हें सर्वप्रथम हमारे उदाहरण के द्वारा शिक्षा देने की अपेक्षा की जाती है, हम उन्हें अपने जीवन द्वारा एक दूसरे से प्रेम करने की शिक्षा देने से चूक जाते हैं। उदाहरण के लिए, जब हम दूसरे पास्टरों के साथ प्रेम और एकता की कमी को दिखाते हैं, तब हम अपनी मण्डली को प्रचार किये गए संदेश से प्रतिकूल संदेश देते हैं। हम उन से वह करने की अपेक्षा करते हैं जो हम नहीं करते।

सच्चाई यह है, *यीशु द्वारा एकता के संबंध में बोले गए सबसे महत्वपूर्ण शब्द अगुवों के अन्य अगुवों के साथ संबंध को लेकर थे।* उदाहरण के लिये, अन्तिम भोज पर, अपने शिष्यों के पांव धोने के पश्चात् यीशु ने उनसे कहा,

> तुम मुझे गुरु और प्रभु कहते हो और भला कहते हो, क्योंकि मैं वही हूं। यदि मैंने प्रभु और गुरु होकर तुम्हारे पांव धोए; तो तुम्हें भी एक दूसरे के पांव धोना चाहिए। क्योंकि मैंने तुम्हें नमूना दिखा दिया है, कि जैसा मैंने तुम्हारे साथ किया है, तुम भी वैसा ही किया करो (यूहन्ना 13:13-15)। (ध्यान दें कि यीशु ने उदाहरण द्वारा सिखाया)

पास्टर पवित्रशास्त्र के इस परिच्छेद का प्रयोग अक्सर अपने झुण्ड को एक दूसरे से प्रेम करने के बारे में सिखाने के लिए करते हैं, जो कि उपयुक्त है। तथापि, इस परिच्छेद में दिये गए शब्दों को अगुवों से कहा गया है अर्थात् यीशु के बारह प्रेरितों से। यीशु जानता था कि यदि उसकी कलीसिया के अगुवों में विभाजन हो या उनमें प्रतिस्पर्द्धा की भावना हो तो उसके सफल होने की आशा बहुत कम है। इसलिए उसने स्पष्ट किया कि *वह अपने अगुवों से दीनता के साथ एक दूसरे की सेवा करने की अपेक्षा करता है।*

अपने दिनों की संस्कृति के हिसाब से, यीशु ने घर के सेवक द्वारा किये जाने वाले सबसे निम्न कार्य पांव धोने के द्वारा दीनता को प्रगट किया। यदि वह भिन्न समय में भिन्न संस्कृति में गया होता तो वह शौचालयों को साफ कर अपने शिष्यों के कूड़ा डालने वाले पात्रों को साफ करता। *आज उसके आधुनिक दिनों के अगुवे इस तरह के प्रेम व दीनता को एक दूसरे के प्रति दिखाने के लिए कितने तैयार हैं?*

एक घण्टे से भी कम के समय में; यीशु ने इस महत्वपूर्ण संदेश को बार-बार रेखांकित किया। कुछ मिनटों के बाद ही उसने अपने शिष्यों के पांव धोए, यीशु ने अपने समूह के भावी कलीसियाई अगुवों से कहा;

> मैं तुम्हें एक नई आज्ञा देता हूं, कि एक दूसरे से प्रेम जैसा मैंने तुमसे प्रेम रखा है, वैसा ही तुम भी एक दूसरे से प्रेम रखो। यदि आपस में प्रेम रखोगे तो इसी से सब जानेंगे कि तुम मेरे चेले हो (यूहन्ना 13:34-45)।

ये शब्द निश्चय ही मसीह के सभी शिष्यों पर लागू होते हैं, *लेकिन ये मूल रूप से अगुवों को उनके दूसरे अगुवों के साथ संबंध को लेकर बोले गए थे।*

एक मिनट बाद यीशु ने फिर से कहा,

> मेरी आज्ञा यह है, कि जैसा मैंने तुम से प्रेम रखा, वैसा ही तुम भी एक दूसरे से प्रेम रखो। इससे बड़ा प्रेम किसी का नहीं, कि कोई अपने मित्रों के लिये अपना प्राण दे (यूहन्ना 15:12-13)।

ध्यान दें कि यीशु पुनः अगुवों से बोल रहा था। कुछ ही सैकेण्ड में उसने फिर से कहा,

> इन बातों की आज्ञा मैं तुम्हें इसलिये देता हूं, कि तुम एक दूसरे से प्रेम रखो (यूहन्ना 15:17)।

तब कुछ ही मिनट पश्चात् यीशु के शिष्यों ने उसे उनके लिए प्रार्थना करते सुना,

> मैं आगे को जगत में न रहूंगा, परन्तु ये जगत में रहेंगे, और मैं तेरे पास आता हूं, हे पवित्र पिता, अपने उस पवित्र नाम से जो

> तू ने मुझे दिया है, उनकी रक्षा कर, कि *वे हमारी नाईं एक हों* (यूहन्ना 17:11, पर बल दिया गया है)।

अन्त में, कुछ सैकेण्ड बाद ही, जिस समय यीशु प्रार्थना कर रहा था, उसके शिष्यों ने उसे यह कहते सुना,

> मैं केवल इन्हीं के लिये विनती नहीं करता, परन्तु उन के लिये भी जो इनके वचन के द्वारा मुझ पर विश्वास करेंगे, *कि वे सब एक हों।* जैसा तू हे पिता मुझ में है, और मैं तुझ में हूं, वैसे ही वे भी हम में हों, *इसलिये कि जगत प्रतीति करे, कि तू ही ने मुझे भेजा।* और वह महिमा जो तू ने मुझे दी, मैंने उन्हें दी है; *कि वे वैसे ही एक हों जैसे कि हम एक हैं।* मैं उन में और तू मुझ में *कि वे सिद्ध हो कर एक हो जाएं, और जगत जाने कि तू ही ने मुझे भेजा,* और जैसा तू ने मुझ से प्रेम रखा, वैसा ही उन से प्रेम रखा (यूहन्ना 17:20-23, पर बल दिया गया है)।

अत: एक घण्टे में ही *6 बार* यीशु ने अपने भावी अगुवों पर एक होने के महत्व पर बल दिया और इस पर भी कि उन्हें अपनी इस एकता का प्रगटीकरण दीनता से एक दूसरे से प्रेम करते हुए तथा एक दूसरे की सेवा करते हुए करना है। यीशु के लिए यह निश्चय ही बहुत महत्वपूर्ण था। यीशु पर संसार द्वारा विश्वास किये जाने की कुंजी उनकी एकता थी।

हम कितनी अच्छी तरह से कर रहे हैं?

How Well Are We Doing?

दुर्भाग्यवश, जबकि हम अपने झुण्ड के प्रेम सहित एक होने की आशा कर रहे होते हैं, हममें से अधिकांश उसी समय में एक दूसरे का विरोध करते हुए दूसरी कलीसियाओं के खर्चे पर अनैतिक साधनों का प्रयोग करते हुए अपनी कलीसियाओं का निर्माण करते हैं। हममें से अधिकांश उन पास्टरों के साथ सहभागिता करने से बचते हैं जिनके सिद्धान्त भिन्न होते हैं। हम अपनी एकता की कमी को संसार के समक्ष कलीसियाई इमारत के सामने लिखे गए चिन्हों या प्रत्येक को इस तरह का संदेश भेजने के द्वारा व्यक्त करते हैं; ''हम दूसरी कलीसियाई इमारतों के मसीहियों के समान नहीं हैं'' (और हमने संसार को अपनी एकता की कमी के बारे में बताकर एक बहुत अच्छा कार्य किया है, क्योंकि अधिकांश गैर विश्वासी यह जानते हैं कि मसीहियत एक विभाजित संस्था है।)

संक्षेप में कहा जाए तो यह, कि हम जो प्रचार करते हैं स्वयं उस पर अमल नहीं करते, और हमारे उदाहरण हमारी मण्डली को एकता के बारे में हमारे संदेश से कहीं

अधिक सिखाते हैं। यह सोचना मूर्खतापूर्ण है कि एक मसीही–एकता और एक दूसरे के साथ प्रेम में रहने जा रहा है जबकि उसके अगुवे इससे भिन्न व्यवहार करते हैं।

इसका एकमात्र समाधान पश्चात्ताप है। हमें संसार और विश्वासियों के सम्मुख गलत उदाहरण स्थापित रखने के कारण पश्चात्ताप करना चाहिए। हमें विभाजित करने वाले अवरोधों को हटाना चाहिए और यीशु की आज्ञानुसार एक दूसरे से प्रेम करना आरम्भ करना चाहिए।

इसका अर्थ यह है कि हमें सबसे पहले अन्य पास्टरों और सेवकों से मिलना चाहिए जिसमें भिन्न सिद्धान्तों वाले पास्टर भी आते हैं। मैं नया जन्म न पाए पास्टरों के साथ सहभागिता करने को नहीं कह रहा हूं, जो यीशु की आज्ञा पालन करने का प्रयास नहीं करते, या जो व्यक्तिगत लाभ की सेवकाई में हैं। वे भेड़ के वस्त्रों में भेड़िये हैं, और यीशु ने हमें उनकी पहचान करने के बारे में बताया है। वे अपने फलों से जाने जाते हैं।

मैं उन पास्टरों और सेवकों की बात कर रहा हूं जो यीशु की आज्ञा पालन करने का प्रयास करते हैं। यदि आप एक पास्टर हैं तो आपको अन्य पास्टरों से प्रेम करना चाहिए, अपने झुण्ड के समक्ष व्यवहारिक रूप में उस प्रेम को प्रगट करते हुए। आरम्भ करने का एक तरीका अपने आस–पास के पास्टरों के पास जाकर उनसे आपसे क्षमा करने को कहना है कि आप उनसे वैसे प्रेम नहीं कर पाए जैसे आपको करना चाहिए था। इससे निश्चय ही कुछ दीवारें गिरनी चाहिए। तत्पश्चात् एक दूसरे के साथ नियमित रूप से भोज करने, प्रोत्साहित करने और एक दूसरे को सिखाने व प्रार्थना करने के लिए मिलते रहें। ऐसा होने पर, आपको धीरे–धीरे उन सिद्धान्तों पर विचार–विमर्श करना चाहिए जो आपको विभाजित करने वाले हैं, लेकिन एकता बनाए रखने का प्रयास करते हुए, चाहे आप विचार–विमर्श की गई प्रत्येक चीज़ से सहमत हों या न हों। मेरा जीवन और सेवकाई उस समय संपन्न हुई थी जब मैं अन्ततः उन सेवकों की सुनने को तैयार हुआ था जिनके सिद्धान्त मुझसे भिन्न थे। स्वयं को बन्द रखने के कारण मैं कई वर्षों तक आशीषों से चूकता रहा था।

आप अपनी कलीसिया या गृह कलीसिया समूह में दूसरे पास्टरों को प्रचार करने के लिए आमंत्रित कर अपने प्रेम को प्रगट कर सकते हैं, या फिर आपकी कलीसिया दूसरी कलीसियाओं या गृह कलीसियाओं के साथ संयुक्त सभाएं कर सकती है।

आप अपनी कलीसिया के नाम को बदल सकते हैं जिससे यह मसीह की शेष देह के साथ संसार के समक्ष आपकी एकता की कमी का विज्ञापन न करे। आप अपनी डिनोमिनेशन या नामांकित संस्था को हटाकर मसीह की देह के साथ जोड़ते हुए प्रत्येक को यह संदेश भेज सकते हैं कि आप यह मानते हैं कि यीशु केवल एक कलीसिया का निर्माण कर रहा है, न कि बहुत सी कलीसियाओं का जो एक दूसरे के साथ–साथ न चल सकें।

मैं जानता हूं कि यह उग्र रूप से बोलता है। लेकिन हर उस चीज़ को क्यों थामे रहें जिसे यीशु ने कभी नहीं चाहा था? उसे अप्रसन्न करने वाली चीज़ों से क्यों जुड़े रहें? पवित्रशास्त्र में किसी भी डिनोमिनेशन या विशेष सहयोगी संस्थाओं का कोई वर्णन नहीं है। जब कुरिन्थवासी अपने मनपसंद शिक्षकों को लेकर विभाजित हुए तो पौलुस ने उन्हें डांटा, यह कहते हुए कि उनके विभाजन उनकी शारीरिकता और आत्मिक शिशुपन को दिखाते हैं (देखें 1 कुरि. 3:1-7)। क्या हमारे विभाजन इससे कुछ कम को प्रगट करते हैं?

हमें एक दूसरे से अलग करने वाली किसी भी चीज़ से बचना चाहिए। गृह कलीसियाओं को स्वयं को नाम देने या उस किसी भी संस्था से जुड़ने से बचना चाहिए जिसका कोई नाम हो। पवित्रशास्त्र में, पृथक कलीसियाओं को केवल उन घरों के द्वारा ही जाना जाता था जहां वे मिलती थीं। कलीसियाओं के समूहों को उन शहरों के नामों से जाना जाता था जहां वे स्थित होती थीं। वे सभी स्वयं को एक कलीसिया—मसीह की देह का एक भाग मानते थे।

केवल एक राजा और एक ही राज्य है। *हर कोई जो स्वयं को विश्वासियों या कलीसियाओं से ऊपर रखता है वह परमेश्वर के राज्य के साथ-साथ अपने राज्य का भी निर्माण कर रहा होता है।* वह उस राजा के समक्ष खड़े होने को तैयार हो गया है जो यह कहता है "अपनी महिमा मैं दूसरे को नहीं दूंगा" (यशा. 48:11)।

इस सब के बारे में फिर से यही कहना है कि सेवक प्रत्येक के समक्ष मसीह के प्रति आज्ञाकारी होने के उदाहरण को रखें, क्योंकि लोग उनके उदाहरण का अनुसरण करने जा रहे हैं। दूसरों के सामने जीवन व्यतीत करने का उनका उदाहरण शिक्षण का सबसे प्रभावी स्रोत है। जैसा पौलुस ने फिलिप्पी के विश्वासियों को भी लिखा:

> हे भाइयो, *तुम सब मिलकर मेरी सी चाल चलो, और उन्हें पहिचान रखो, जो इस रीति पर चलते हैं जिस का उदाहरण तुम हम में पाते हो* (फिलि. 3:17 पर बल दिया गया है)।

क्या सिखाना है

What to Teach

पौलुस के समान शिष्य-निर्माता सेवक का भी एक लक्ष्य होता है। वह लक्ष्य "प्रत्येक व्यक्ति को मसीह में सिद्ध करके प्रस्तुत करने" का है (कुलु. 1:28 ब)। इसलिए वह भी पौलुस के समान, "प्रत्येक व्यक्ति को *जता देता* और सारे ज्ञान से प्रत्येक मनुष्य को *सिखाता* है" (कुलु. 1.28 अ, अतिरिक्त बल)। ध्यान दें कि पौलुस ने लोगों को शिक्षित करने या उनका मनोरंजन करने के लिए शिक्षा नहीं दी।

शिष्य-निर्माता सेवक पौलुस के साथ कह सकता है, "शुद्ध मन और अच्छे विवेक,

और कपटरहित विश्वास से प्रेम उत्पन्न हो'' (1 तीमु. 1:5)। जिन लोगों की वह सेवा करता है उनके जीवनों में वह मसीह के स्वभाव और पवित्रता को उत्पन्न करना चाहता है। वह अपने सुनने वालों को यह जताते हुए सत्य को सिखाता है ''सब से मेल मिलाप रखने और उस पवित्रता के खोजी हो जिसके बिना कोई प्रभु को कदापि न देखेगा'' (इब्रा. 12:14)।

शिष्य-निर्माता सेवक यह जानता है कि यीशु ने अपने शिष्यों को उनके शिष्यों को *सभी* आज्ञाओं का पालन कराने की आज्ञा दी, न कि आज्ञा के एक भाग की (देखें मत्ती 28:19-20)। वह इस बारे में सुनिश्चित हो जाना चाहता था कि मसीह के द्वारा दी गई किसी भी आज्ञा की उपेक्षा न की जाए, और इसी कारण वह नियमित रूप से सुसमाचार और पत्रियों से एक-एक पद करके सिखाता है। यीशु की आज्ञाओं का विवरण और पुन: बल यहीं दिया गया है।

इस तरह की व्याख्यात्मक शिक्षा यह भी सुनिश्चित कराती है कि उसके निर्देश संतुलित बने रहेंगे। प्रासंगिक संदेशों पर सिखाते हुए, हम उन विषयों पर केन्द्रित होना अधिक उपयुक्त मानते हैं जो लोगों में प्रचलित होते हैं और उनकी उपेक्षा करना चाहते हैं जो प्रचलित नहीं होते। एक एक पद करके शिक्षा देने वाला शिक्षक न केवल परमेश्वर के प्रेम के बारे में सिखाएगा, बल्कि उसके क्रोध और अनुशासन के बारे में भी। वह न केवल मसीही होने की आशीषों के बारे में बताएगा, लेकिन उत्तरदायित्वों के बारे में भी। वह कम महत्वपूर्ण या अधिक महत्वपूर्ण चीज़ों पर बल नहीं देगा। (यीशु के अनुसार, यह फरीसियों की एक कमी थी; देखें मत्ती 23:23-24)

व्याख्यात्मक शिक्षा के भयों पर विजय पाना
Overcoming Fears of Expository Teaching

अधिकांश पास्टर एक-एक पद करके सिखाने से डरते हैं क्योंकि पवित्रशास्त्र में इतना कुछ है कि वे सब कुछ समझ नहीं पाते, और वे यह नहीं चाहते कि उनकी मण्डली यह जाने कि वे कितना कुछ नहीं जानते हैं! यह, बेशक घमण्ड से पूर्ण होना है। इस पृथ्वी पर ऐसा कोई भी नहीं है जो पवित्रशास्त्र की हर चीज़ को सही तरह से समझता हो। पतरस ने भी कहा कि पौलुस द्वारा लिखी गई कुछ चीज़ों को समझना कठिन था (देखें 2 पत. 3:16)।

एक-एक पद करके सिखाने वाला पास्टर जब एक ऐसे पद या परिच्छेद पर पहुंचता है जिसे वह नहीं समझता है, तो उसे अपने झुण्ड को बता देना चाहिए कि वह अगले भाग को नहीं समझ पा रहा है और आगे बढ़ जाए। वह यह भी निवेदन कर सकता है कि उसकी मण्डली प्रार्थना करे कि पवित्र आत्मा उसकी समझने में सहायता करे। उसकी नम्रता झुण्ड के सम्मुख एक अच्छे उदाहरण को रखेगी, *जो स्वयं में एक संदेश है।*

एक गृह कलीसिया के पास्टर/प्राचीन/निरीक्षक के पास एक छोटे समूह को

अनौपचारिक रूप में शिक्षा देने का अतिरिक्त अवसर होता है, क्योंकि उसके शिक्षण के समय में प्रश्न पूछे जा सकते हैं। यह पवित्र आत्मा के लिए समूह में दूसरों के प्रति पवित्रशास्त्र के संबंध में अन्तर्दृष्टि देने की क्षमता को खोलता है, जिसका अध्ययन किया गया है। प्रत्येक से सीखते हुए परिणाम अधिक प्रभावी हो सकता है।

मसीह की आज्ञाओं को सिखाने का एक अच्छा आरम्भिक स्थान उसका पहाड़ी उपदेश है जो मत्ती 5-7 में पाया जाता है। वहां यीशु ने बहुत सी आज्ञाएं दीं, और उसने अपने यहूदी अनुयायियों की मूसा द्वारा दिये गए नियमों की समझने में सहायता की। इस पुस्तक में कुछ समय पश्चात् ही, मैं पहाड़ी उपदेश से एक-एक पद करके सिखाऊंगा, यह दिखाने को कि ऐसा कैसे किया जा सकता है।

संदेश की तैयारी

Sermon Preparation

नये नियम में ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि किसी भी पास्टर/प्राचीन/निरीक्षक ने कभी एक साप्ताहिक संदेश की तैयारी की हो, स्पष्ट रूप से प्रमुख बातों को तथा उदाहरणों को रूपरेखा में लिखते हुए, जैसा अधिकांश आधुनिक सेवक करते हैं। निश्चय ही हममें से कोई भी यीशु के द्वारा ऐसा किये जाने की अपेक्षा नहीं कर सकता है! आरम्भिक कलीसिया में दी जाने वाली शिक्षा अधिक सहज होने के साथ-साथ प्रभावित करने वाली भी हुआ करती थी, वाकपटुता की तुलना में यहूदी रीति का अनुसरण करते हुए जैसी कि यूनानी और रोमी लोगों की रीति थी, एक ऐसी परम्परा जिसे धीरे धीरे कलीसिया द्वारा संस्थागत होने पर ग्रहण कर लिया गया था। यदि यीशु ने अपने शिष्यों को न्यायालय में पहुंचने पर बचाव की चिन्ता न करने के बारे में कहा, उनसे यह प्रतिज्ञा करते हुए कि पवित्र आत्मा उन्हें बोलने के लिए शब्द देगा—अखण्डनीय शब्द, तो हमें भी यह आशा करनी होगी कि परमेश्वर पास्टर की भी कलीसियाई समूह में सहायता करेगा।

इसका अर्थ यह नहीं है कि सेवकों को प्रार्थना और अध्ययन करने के द्वारा *स्वयं* तैयारी नहीं करनी चाहिए। पौलुस तीमुथियुस से कहता है:

> अपने आप को परमेश्वर का ग्रहण योग्य और ऐसा काम करने वाला ठहराने का प्रयत्न कर जो लज्जित होने न पाए, और जो सत्य के वचन को ठीक रीति से काम में लाता हो (2 तीमु. 2:15)।

पौलुस के इस निर्देश का अनुसरण करने वाले सेवक ''मसीह के वचन को अपने हृदय में अधिकाई से बसने दो'' (कुलु. 3:16)' परमेश्वर के वचन से इतने भरपूर होंगे कि वे अपने ''उमड़ने'' से सिखाने के योग्य होंगे। अत: प्रिय पास्टर, महत्वपूर्ण चीज़ यह है कि आप स्वयं को बाइबल में डुबा दें। यदि आप अपने विषय को लेकर उमंग से भरे हैं तो परमेश्वर के सत्य को सम्प्रेषित करने के लिए बहुत कम तैयारी

की ही आवश्यकता होगी। इसके अतिरिक्त, यदि आप एक एक पद करके सिखाते हैं तो आप अपनी रूपरेखा में दो पदों का एक साथ प्रयोग कर सकते हैं। आप जिन पदों को सिखाएंगे आपकी तैयारी उन पर प्रार्थनापूर्ण मनन करने के द्वारा होनी चाहिए। यदि आप एक गृह कलीसिया के पास्टर हैं तो शिक्षा की प्रभावी प्रवृत्ति इतनी अधिक हो जाएगी कि संदेश-रूपरेखा की आवश्यकता न होगी।

वह सेवक जो संदेश दिये जाने के समय में परमेश्वर की ओर से आनेवाली सहायता पर विश्वास करता है उसे वह सहायता अवश्य मिलेगी। अत: स्वयं पर और अपनी तैयारी व टिप्पणियों पर कम भरोसा करते हुए परमेश्वर पर अधिक भरोसा करें। विश्वास और आत्मविश्वास को प्राप्त कर लेने के पश्चात् कुछ संदेश-टिप्पणियों को तैयार करें, जब तक कि आपको एक बाहरी रूपरेखा मिल जाए या न मिले।

दूसरों के सम्मुख संकोचशील रहनेवाला व्यक्ति टिप्पणियों को तैयार करने में अधिक निर्भर रहेगा क्योंकि वह सार्वजनिक रूप से गलती किये जाने से भयभीत रहता है। उसे यह जानने की ज़रूरत है कि उसके भय की जड़ असुरक्षा में है जिसकी जड़ घमण्ड है। उसे यह जानने की अधिक चिन्ता होती है कि वह लोगों की दृष्टि में कैसा है बजाय इसके कि परमेश्वर की दृष्टि में वह कैसा है। ऐसी स्थिति में तैयार किया गया संदेश लोगों के हृदयों का स्पर्श नहीं कर सकता और न ही वह आत्मा द्वारा अभिषिक्त शिक्षा होती है। ज़रा सोचें कि यदि हर कोई बात करने के लिए टिप्पणियां तैयार करने लग जाए तो वार्त्तालाप में कितनी बाधा आ जाएगी। वार्त्तालाप मर जाएगा! एक तैयार किये गए संवाद की तुलना में बिना किसी तैयारी का वार्त्तालाप कितना अधिक स्पष्ट होता है। शिक्षा देना अभिनय करना नहीं है। यह सत्य को प्रवाहित करना है। हम सभी जानते हैं कि संदेश को सुनते और बोलते हुए हमारी प्रवृत्ति उसमें बंध जाने की हो जाती है।

चार अतिरिक्त विचार

Four More Thoughts

(1) कुछ सेवक तोतों के समान हैं, वे दूसरे लेखकों द्वारा लिखी गई पुस्तकों से सारी सामग्री को प्राप्त करते हैं। वे व्यक्तिगत रूप से पवित्र आत्मा द्वारा दी जाने वाली शिक्षा से चूक रहे हैं और वे भी उन्हीं लेखकों के समान गलतियों को दोहराते हैं जिनकी उन्होंने नकल की होती है।

(2) बहुत से पास्टर दूसरों पास्टरों की प्रचार और शिक्षण प्रणाली की नकल करते हैं, वे प्रणालियां जो प्राय: परम्परागत होती हैं। उदाहरण के लिए, कुछ का सोचना यह है कि केवल वही संदेश अभिषिक्त होते हैं जिन्हें ज़ोर से और तीव्रता से बोला जाता है। कलीसिया में शामिल होने वाले वे उन संदेशों के शिकार बनते हैं जिनमें आरम्भ से लेकर अन्त तक चिल्लाना ही होता है। सच्चाई यह है कि लोग व्यर्थ में

ही चिल्लाते हैं, ठीक उसी तरह जब वे कोई नीरस बोली को सुनते हैं। विविध तरह की आवाज़ अधिक नियंत्रण करने वाली होती है। इसके अतिरिक्त *प्रचार* तो स्वयं ही स्वाभाविक रूप से तेज़ आवाज़ वाला होता है क्योंकि यह उपदेश देने वाला होता है, जबकि *शिक्षण* को सामान्यता वार्त्तालाप के तरीके से दिया जाता है क्योंकि यह निर्देशात्मक होता है।

(3) सैकड़ों कलीसियाई सेवा में मैंने संदेश-सुननेवालों को देखा है, और मुझे इससे आश्चर्य होता है कि इतने अधिक प्रचारक और शिक्षक लोगों द्वारा दिये जाने वाले संकेत को भूल जाते हैं कि लोग ऊब रहे हैं। नहीं सुन रहे हैं। पास्टर की ओर देखने वाले लोग ऊबते जाते हैं। आपके बोलते समय जो आपकी ओर देख नहीं रहे होते हैं, वे संभवत: सुन नहीं रहे होते हैं। न सुनने वाले लोगों की किसी भी तरह से सहायता नहीं की जा सकती है। यदि *सही* लोग सुन नहीं रहे होते हैं या फिर वे ऊब जाते हैं तो आपको अपने संदेशों में सुधार करने की ज़रूरत है। अधिक उदाहरण दें। संबन्धित कहानियां सुनाएं। दृष्टांत बनाएं। इसे सरल करें। अपने मन से वचन की शिक्षा दें। सही बनें। अपनी आवाज़ में विविधता लाएं। अधिक से अधिक श्रोताओं से दृष्टि संपर्क करें। कुछ मुख अभिव्यक्तियों का प्रयोग करें। अपने हाथों का प्रयोग करें। चारों ओर घूमें। अधिक देर तक न बोलें। यदि समूह छोटा है, तो लोगों को किसी भी उपयुक्त समय पर प्रश्न पूछने की अनुमति दें।

(4) इस तरह का विचार रखना कि प्रत्येक संदेश में तीन प्रमुख रूपरेखा होनी चाहिए, केवल एक मानव-धारणा है। लक्ष्य शिष्य बनाने का है न कि आधुनिक उपदेश-कला थियोरी के अनुसार चलने का। यीशु ने कहा, ''मेरी भेड़ों को चरा'' न कि ''मेरी भेड़ों को प्रभावित कर।''

किसे सिखाना है
Whom to Teach

यीशु के नमूने का अनुसरण करते हुए शिष्य निर्माता को इस संबन्ध में चयन करना है कि वह *किसे* सिखाता है। इससे आपको आश्चर्य हो सकता है, लेकिन यह सत्य है। यीशु प्राय: भीड़ से दृष्टांतों में बोला, और उसके पास ऐसा करने का कारण था: वह नहीं चाहता था कि जो कुछ वह कह रहा था उसे हर कोई समझे। पवित्रशास्त्र से यह स्पष्ट हो जाता है:

> और चेलों ने पास आकर उससे कहा, ''तू उनसे दृष्टांतों में क्यों बातें करता है?'' उसने उत्तर दिया कि ''तुम को स्वर्ग के राज्य के भेदों की समझ दी गई है, पर उनको नहीं। क्योंकि जिसके पास है उसे दिया जाएगा; और उसके पास बहुत हो जाएगा; पर जिसके पास कुछ नहीं है, उससे जो कुछ उसके पास है, वह भी

> ले लिया जाएगा। मैं उनसे दृष्टांतों में इसलिये बातें करता हूं, कि वे देखते हुए नहीं देखते, और सुनते हुए नहीं सुनते; और नहीं समझते'' (मत्ती 13:10-13)।

मसीह के दृष्टांतों को समझने का विशेषाधिकार केवल उनके लिए आरक्षित किया गया था जिन्होंने पश्चात्ताप करने के साथ-साथ उसके पीछे चलने का निश्चय किया था। जो पश्चात्ताप करने के अवसर से फिर गए थे, अपने जीवनों के लिए परमेश्वर की इच्छा का सामना करते हुए, उन्होंने परमेश्वर का विरोध किया था। परमेश्वर अहंकारियों का सामना करता है परन्तु नम्र पर वह अनुग्रह करता है (देखें 1 पत. 5:5)।

इसी तरह से यीशु ने अपने शिष्यों को निर्देश दिया: ''पवित्र वस्तु कुत्तों को न दो और अपने मोती सूअरों को आगे मत डालो; ऐसा न हो कि वे उन्हें पांवों तले रौंदें और पलटकर तुम को फाड़ डालें'' (मत्ती 7:6)। निस्संदेह यीशु अलंकारिक रूप में बोल रहा था। उसका अभिप्राय था, ''उन लोगों को कीमती वस्तु न दो जो उसकी कीमत की सराहना करना नहीं जानते हैं।'' सूअर मोती के मूल्य को नहीं समझते। इसी तरह से आत्मिक सूअर परमेश्वर के वचन को सुनने पर उसकी कीमत को नहीं जानते। यदि उन्होंने सच में इस पर विश्वास किया होता कि जो कुछ वे सुन रहे हैं वह परमेश्वर का वचन है तो वे अपना सारा ध्यान इस पर देते हुए इसका आज्ञा पालन करें।

आप किसी के आत्मिक सूअर होने के बारे में कैसे जानते हैं? आप उसके मार्ग में एक मोती डालें और देखें कि वह उस मोती के साथ क्या करता है। यदि वह उसकी परवाह न करे तो आप जान लें कि वह आत्मिक सूअर है। यदि वह उसका आज्ञा पालन करें तो आप जान लें कि वह आत्मिक सूअर नहीं है।

दुर्भाग्यवश, बहुत से पास्टर वह कर रहे हैं जिसे यीशु ने उनसे नहीं करने को कहा था, लगातार अपने मोती सूअरों के आगे डालते हुए, उन लोगों को परमेश्वर के वचन की शिक्षा देते हुए जो उसको अस्वीकृत कर देते या फिर उसका सामना करते हैं। *ये सेवक परमेश्वर द्वारा दिये गए अपने समय को बर्बाद कर रहे हैं।* उन्हें यीशु की आज्ञानुसार अपने पांवों की धूल झाड़कर आगे बढ़ जाना चाहिए।

भेड़, बकरियां और सूअर

The Sheep, Goats and Pigs

सच्चाई यह है कि आप उसे शिष्य नहीं बना सकते हैं जो शिष्य बनना नहीं चाहता है, वह जो यीशु की आज्ञा का पालन करना नहीं चाहता है। अधिकांश कलीसियाएं इस तरह के लोगों से भरी हुई हैं, वे लोग जो केवल सांस्कृतिक मसीही हैं, उनमें से अधिकांश यीशु और मसीहियत के बारे में दी गई कुछ थियोलोजिकल मंजूरी के कारण स्वयं को नया जन्म पाया हुआ सोचते हैं। तौभी, अधिकांश पास्टर अपना 90

प्रतिशत समय सूअरों और बकरियों को प्रसन्न करने में बिताते हैं, उनकी उपेक्षा करते हुए जिनकी वे आत्मिक रूप से सहायता कर सकते हैं या जिन्हें उनकी सेवा करनी चाहिए-सच्ची भेड़ें। पास्टर यीशु चाहता है कि आप उसकी *भेड़ों* को चराएं न कि बकरियों और सूअरों को (देखें यूह. 21:17)।

लेकिन आप यह कैसे जान पाते हैं कि कौन भेड़ हैं? ये वे हैं जो कलीसिया में सबसे पहले आते हैं और सबसे अन्त में जाते हैं। उनमें सत्य को सीखने की भूख है, क्योंकि यीशु उनका प्रभु है और वे उसे प्रसन्न रखना चाहते हैं। वे केवल रविवार को ही कलीसिया नहीं जाते, बल्कि जब कभी भी वहां समूह एकत्रित होते हैं। वे छोटे समूहों से जुड़े रहते हैं। वे प्रायः प्रश्न करते हैं। वे प्रभु के बारे में उत्तेजित रहते हैं। वे सेवा करने के अवसरों की तलाश में रहते हैं।

पास्टर, अपना अधिकांश समय और ध्यान इस तरह के लोगों पर दो। वे ही शिष्य हैं। अपनी कलीसिया में आने वाले सूअरों और बकरियों को तब तक ही सुसमाचार का प्रचार करो जब तब वे वहां टिक सकते हैं। लेकिन आपके द्वारा सत्य सुसमाचार के प्रचार किये जाने पर वे अधिक समय तक टिक नहीं पाएंगे। वे या तो कलीसिया से चले जाएंगे, या यदि उनके पास शक्ति होगी तो वह आपको आपके पद से हटा देंगे। उनके सफल हो जाने पर वहां से जाने से पहले अपने पांव की धूल को वहीं झाड़ दें। (एक गृह कलीसिया में इस तरह की चीज़ नहीं हो सकती, विशेष रूप से जब *आपकी* कलीसिया घर में होती हो!)

इसी तरह से प्रचारकों को भी उन लोगों को सुसमाचार का प्रचार नहीं करते रहना चाहिए जो बार बार इसका तिरस्कार करते रहते हैं। मुर्दों को अपने मुर्दे गाड़ने दें (देखें लूका 9:60)। आप राजाओं के राजा की ओर से महत्वपूर्ण संदेश को लेकर जानेवाले मसीह के राजदूत हैं! परमेश्वर के राज्य में आपका स्थान बहुत बड़ा है और उसी के साथ साथ आपका उत्तरदायित्व भी बड़ा है। यदि एक बार किसी ने सुसमाचार को सुन लिया है तो दोबारा उसे सुनाकर अपने समय को बर्बाद नहीं करें।

यदि आप एक शिष्य-निर्माता सेवक बनने जा रहे हैं तो आपको यह चयन करना चाहिए कि आपको किसे शिक्षा देनी है, उन लोगों पर अपने कीमती समय को बर्बाद न करते हुए जो यीशु की आज्ञा का पालन करना नहीं चाहते। पौलुस ने तीमुथियुस को लिखा,

> और जो बातें तूने बहुत गवाहों के सामने मुझ से सुनी हैं, उन्हें *विश्वासी* मनुष्यों को सौंप दे, जो औरों को भी सिखाने के योग्य हों (2 तीमु. 2:2, पर बल दिया गया है)।

लक्ष्य तक पहुंचना
Reaching the Goal

एक क्षण के लिए किसी ऐसी चीज़ की कल्पना करें जो कभी भी यीशु की सेवकाई में नहीं हुई थी, लेकिन आधुनिक कलीसियाओं में हर समय होती रहती है। कल्पना करें कि यीशु ने पुनरुत्थान के पश्चात् पृथ्वी पर ही रुककर एक आधुनिक संस्थागत कलीसिया का आरम्भ किया, और इसके बाद 30 वर्ष तक उसमें पास्टर के रूप में कार्य किया। एक ही मण्डली को प्रति रविवार उसके द्वारा दिये जाने वाले संदेश की कल्पना करें। पतरस, याकूब और यूहन्ना के यीशु के संदेश दिये जाने के समय में प्रथम पंक्ति में बैठे होने की कल्पना करें, जहां वे बीस वर्षों से प्रति रविवार को बैठते हैं। कल्पना करें कि पतरस यूहन्ना की ओर झुककर उसके कान में कहता है, ''हम इसी संदेश को दस बार सुन चुके हैं।''

हम जानते हैं कि इस तरह के दृश्य का कोई अर्थ नहीं है, क्योंकि हम सभी जानते हैं कि यीशु स्वयं को और अपने प्रेरितों को कभी भी इस तरह की स्थिति में नहीं डालेगा। यीशु कुछ शिष्य बनाने के लिए आए और उन्होंने इस कार्य को एक निश्चित समय में एक निश्चित तरीके से किया। तीन वर्षों से भी अधिक समय में, उसने पतरस, याकूब, यूहन्ना और कुछ अन्यों को शिष्य बनाया। उसने ऐसा एक ही कलीसियाई इमारत में प्रति रविवार प्रचार करने के द्वारा नहीं किया। उसने ऐसा उनके सम्मुख अपना जीवन जीने के द्वारा, उनके प्रश्नों के उत्तर देने के द्वारा और उन्हें सेवा करने के अवसर देने के द्वारा किया। अपने कार्य को पूरा करने के बाद वह चला गया।

अत:, हम वह क्यों करे जिसे यीशु ने कभी नहीं किया। एक ही तरह के लोगों को दशकों से संदेशों का प्रचार करते हुए जो परमेश्वर पूरा कराना चाहता है हम उसे पूरा करने का प्रयास क्यों करें? क्या हम कभी अपने कार्य को पूरा कर पाएंगे? हमारे शिष्य, कुछ ही वर्षों पश्चात् अपने स्वयं के शिष्य बनाने को तैयार क्यों नहीं हो जाते हैं?

मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि यदि हम अपने कार्यों को सही तरह से कर रहे हैं, तो निश्चय ही एक ऐसा समय आएगा जब हमारे शिष्य इतने परिपक्व हो जाएंगे कि उन्हें हमारी सेवकाई की अधिक समय तक ज़रूरत नहीं रहेगी। वे अपने लिए शिष्य बनाएंगे। परमेश्वर ने जिस लक्ष्य को हमारे सामने रखा है हमसे वहां तक पहुंचने की अपेक्षा की गई है, और यीशु ने हमें दिखाया कि इसे कैसे करना है। संयोगवश, एक विकासशील कलीसिया में लोगों को शिष्य बनाने और अगुवों को बढ़ाने की आवश्यकता बनी रहती है। एक मज़बूत गृह कलीसिया दशकों तक एक ही तरह के लोगों को एक ही प्रचारक द्वारा प्रचार किये जाने वाले अंतहीन दायरे में नहीं गिरेगी।

उचित उद्देश्य

Right Motives

शिष्य निर्माण का नेतृत्व करने वाली शिक्षा की सफलता के लिए उचित उद्देश्यों को रखने से अधिक महत्वपूर्ण और कुछ नहीं होता। यदि कोई कुछ गलत कारणों से सेवकाई में होता है, तो वह गलत चीज़ें ही करता है। आज कलीसिया में झूठी और असंतुलित शिक्षाओं के होने का यही प्रमुख कारण है। जब एक सेवक का उद्देश्य प्रसिद्धि प्राप्त करने, दूसरों की दृष्टि में सफल होने, या बहुत सा धन कमाने का होता है तो वह परमेश्वर की दृष्टि में असफल होने के लिए निर्धारित हो जाता है। सबसे दुखद चीज़ यह है कि, हो सकता है कि वह प्रसिद्धि प्राप्त करने, दूसरों की दृष्टि में सफल होने या बहुत सा धन कमाने के अपने लक्ष्य में सफल हो जाए, लेकिन वह दिन आएगा जब उसके गलत उद्देश्य मसीह के न्याय आसन के सामने खुल जाएंगे, और उसे अपने कार्य का कोई प्रतिफल नहीं मिलेगा। *यदि* उसे स्वर्ग में प्रवेश करने की अनुमति मिल भी जाती है,[28] तो वहां हर किसी को उसकी सच्चाई के बारे में पता होगा, क्योंकि उसके प्रतिफल की कमी तथा राज्य में उसका निम्न स्थान इसे प्रगट कर देगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि स्वर्ग में अलग अलग दर्जे हैं। यीशु ने चेतावनी दी :

> इसलिये जो कोई इन छोटी से छोटी आज्ञाओं में से किसी एक को तोड़े, और वैसा ही लोगों को सिखाए, वह स्वर्ग के राज्य में सबसे छोटा कहलाएगा, परन्तु जो कोई उनका पालन करेगा और उन्हें सिखाएगा, वही स्वर्ग के राज्य में महान कहलाएगा (मत्ती 5:19)।

निस्संदेह, मसीह की आज्ञाओं का पालन करने व सिखाने वाले सेवक पृथ्वी पर रहते हुए दुख उठाएंगे। यीशु ने उसकी आज्ञा का पालन करने वालों के लिए दुख की प्रतिज्ञा की है (देखें मत्ती 10-12; यूहन्ना 16:33)। उन्हें बहुत कम ही सांसारिक सफलता, प्रसिद्धि और धन मिल पाता है। लेकिन वे भविष्य के इनाम और परमेश्वर की सराहना को प्राप्त कर पाते हैं। आपके पास कौन सा होगा? इस संबन्ध में पौलुस ने लिखा :

> अपुल्लोस क्या है? और पौलुस क्या? केवल सेवक, जिनके द्वारा तुमने विश्वास किया, जैसा हर एक को प्रभु ने दिया। मैंने लगाया, अपुल्लोस ने सींचा, परन्तु परमेश्वर ने बढ़ाया। इसलिये न तो लगाने वाला कुछ है, और न सींचने वाला परन्तु परमेश्वर जो बढ़ानेवाला है। लगानेवाला और सींचनेवाला दोनों एक हैं। परन्तु हर एक व्यक्ति

28. मैंने ''यदि'' इसलिए कहा क्योंकि वे भेड़िये जिन्होंने भेड़ के वस्त्र पहने हुए हैं स्पष्टतया वे ''सेवक'' हैं जो स्वार्थी हैं, और वे नरक में डाले जाएंगे। मेरा मानना है कि जो चीज़ उन्हें सच्चा सेवक होने से रोकती है वह उनकी गलत प्रेरणा हैं।

> अपने ही परिश्रम के अनुसार अपनी ही मज़दूरी पाएगा। क्योंकि हम परमेश्वर के सहकर्मी हैं; तुम परमेश्वर की खेती और परमेश्वर की रचना हो।
>
> परमेश्वर के उस अनुग्रह के अनुसार जो मुझे दिया गया, मैंने बुद्धिमान राजमिस्त्री की नाईं नेव डाली, और दूसरा उस पर रद्दा रखता है; परन्तु हर एक मनुष्य चौकस रहे, कि वह उस पर कैसा रद्दा रखता है। क्योंकि उस नेव को छोड़ जो पड़ी है, और वह यीशु मसीह है: कोई दूसरी नेव नहीं डाल सकता। और यदि कोई उस नेव पर सोना या चांदी या बहुमोल पत्थर या काठ या घास या फूस का रद्दा रखे। तो हर एक का काम प्रगट हो जाएगा; क्योंकि वह दिन उसे बताएगा; इसलिये कि आग के साथ प्रगट होगा : और वह आग हर एक का काम परखेगी कि कैसा है? जिस का काम उस पर बना हुआ स्थिर रहेगा, वह मज़दूरी पाएगा। और यदि किसी का काम जल जाएगा, तो वह हानि उठाएगा; पर वह आप बच जाएगा परन्तु जलते जलते (1 कुरि. 3:5-15)।

पौलुस ने स्वयं को एक राजमिस्त्री के समान बताया जो एक नेव का निर्माण करता है। अपुल्लोस नामक शिक्षक जो पौलुस के पश्चात् कुरिन्थ में आया और उसने वहां एक कलीसिया की स्थापना की, पौलुस उससे जुड़ा हुआ था जिसने पहले से तैयार की गई नेव पर निर्माण किया था।

ध्यान दें कि पौलुस और अपुल्लोस को अन्ततः उनके कार्य की *गुणवत्ता* के आधार पर प्रतिफल मिलेगा न कि *मात्रा* के आधार पर।

अलंकारिक रूप से यदि कहा जाए तो पौलुस और अपुल्लोस दोनों ही छह भिन्न सामग्रियों से परमेश्वर की इमारत का निर्माण कर सके, जिनमें से तीन साधारण हैं, सस्ती और ज्वलनशील - और जिनमें से तीन असाधारण हैं, कीमती परन्तु ज्वलनशील नहीं। एक दिन उनकी इमारत की सामग्री परमेश्वर के न्याय की आग में जाएगी, और लकड़ी, घास व फूस आग से जल जाएंगे अपनी व्यर्थता और अस्थायी गुणवत्ता को दिखाते हुए। सोना, चांदी और बहुमूल्य पत्थर उन कार्यों को प्रस्तुत करते हैं जो परमेश्वर की दृष्टि में कीमती और अनन्त हैं, वे आग की परख को सह लेंगे।

हम इस बारे में निश्चित हो सकते हैं कि गैर बाइबल संबन्धी शिक्षा मसीह के न्याय पर जलकर राख बन जाएगी। उसी तरह से शरीर की सामर्थ, विधियों और बुद्धि से की जाने वाली कोई भी चीज़ या गलत उद्देश्यों से किया जाने वाला कोई भी कार्य है। यीशु ने चिताया कि यदि हम किसी कार्य को लोगों की सराहना पाने के लिए

करते हैं तो उसके लिए हमें परमेश्वर की ओर से कोई प्रतिफल नहीं मिलेगा (देखें मत्ती 6:1-6, 16-18)। इस तरह के बेकार के कार्य चाहे अभी मनुष्यों के समक्ष प्रगट न हों लेकिन जैसा कि पौलुस ने चेतावनी दी, वे निश्चय ही सभी पर भविष्य में प्रगट होंगे। व्यक्तिगत रूप से यदि मेरे कार्य लकड़ी, घास और फूस की श्रेणी के हैं, तो अभी या बाद में ये मुझ पर प्रगट हो जाएंगे। अभी पश्चात्ताप करने का समय है; नहीं तो बहुत देर हो जाएगी।

अपने उद्देश्यों की जांच करना
Checking Our Motives

अपने उद्देश्यों को लेकर स्वयं को धोखा देना बहुत आसान है। मैंने निश्चय ही ऐसा किया है। यदि हमारे उद्देश्य शुद्ध हैं तो यह हम कैसे जान सकते हैं?

सबसे अच्छा तरीका इसे परमेश्वर से हम पर प्रगट करने को कहना है, और उसके बाद अपने विचारों और कार्यों की जांच करनी है। यीशु ने हमसे भले कार्य करने को कहा, जैसे गुप्त में प्रार्थना करना और गरीबों को दान देना, और यह स्वयं को सुनिश्चित कराने का सबसे अच्छा तरीका है कि हम कुछ अच्छा कर रहे हैं क्योंकि हम लोगों की प्रशंसा पाने से अधिक परमेश्वर की प्रशंसा पाना चाहते हैं। जिस समय लोगों की दृष्टि हम पर हो और हम केवल परमेश्वर के ही आज्ञाकारी रहें तो यह कुछ गलत होने का संकेत देता है। या, यदि हम लज्जाजनक पापों से बचें कि कहीं वे हमारी प्रतिष्ठा को नष्ट न कर दें, यदि हम उनमें पड़ जाएं; लेकिन यदि छोटे-छोटे पापों में पड़े हैं जिनके बारे में कोई न जानता हो, तो यह प्रगट करता है कि हमारे उद्देश्य गलत हैं। यदि हम सच में परमेश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास कर रहे हैं-जो हमारे प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य को जानता है-तब हम प्रत्येक चीज़ में उसकी आज्ञा मानने का प्रयास करेंगे, बड़ी और छोटी चीज़ों में, दूसरों से परिचित या अपरिचित चीज़ों में।

इसी तरह से, यदि हमारे उद्देश्य सही हैं, तो हम कलीसिया के विकास जैसी सनक का अनुसरण नहीं करेंगे, जो केवल उन शिष्यों का निर्माण करते हुए कलीसियाई उपस्थिति में वृद्धि के लिए सेवा करना है जो कि मसीह की सभी आज्ञाओं का पालन करते हैं।

हम परमेश्वर के सभी वचनों को सिखाएंगे और केवल प्रचलित विषयों पर ही ध्यान केन्द्रित नहीं करेंगे जो केवल सांसारिक और गैर-आत्मिक लोगों के लिए ही हों।

हम परमेश्वर के वचन को नहीं घुमाएंगे और न ही पवित्रशास्त्र से इस तरह से शिक्षा देंगे जो संपूर्ण बाइबल में उनके संदर्भ से मेल न खाती हो।

हम अपने लिए उपाधियों और आदर के स्थान पाने की इच्छा नहीं करेंगे। हम विख्यात होने का प्रयास नहीं करेंगे। हम धनी होने का प्रबन्ध नहीं करेंगे।

हम पृथ्वी पर खज़ाना जमा नहीं करेंगे, बल्कि साधारण रूप से जीवन बिताते हुए जो हम दे सकते हैं उस सब को देंगे, अपने झुण्ड के सम्मुख अच्छे भण्डारी का उदाहरण रखते हुए।

हम इस बारे में अधिक चिन्ता करेंगे कि परमेश्वर हमारे संदेशों के बारे में क्या सोचता है उसकी अपेक्षा कि लोग क्या सोचते हैं।

आपके उद्देश्य कैसे हैं?

शिष्य-निर्माण को परास्त करने वाला सिद्धान्त

A Doctrine that Defeats Disciple-Making

शिष्य-निर्माण करने वाला सेवक कभी भी ऐसी शिक्षा नहीं देता जो शिष्य बनाने के लक्ष्य के विरोध में कार्य करती है। अत: *वह कभी भी ऐसा कुछ नहीं कहता जिससे लोगों को प्रभु यीशु की आज्ञा का उल्लंघन करने में कोई परेशानी लगे।* वह परमेश्वर के अनुग्रह को कभी भी पाप के ऐसे स्रोत के रूप में प्रस्तुत नहीं करता जिसमें न्याय का भय न हो। इसके विपरीत, वह परमेश्वर के अनुग्रह को पाप से पश्चात्ताप करने और एक विजयी जीवन जीने के साधन के रूप में रखता है। पवित्रशास्त्र, जैसा कि हम जानते हैं; यह घोषणा करता है कि केवल विजेता ही परमेश्वर के राज्य के अधिकारी होंगे (देखें प्रका. 2:11; 3:5; 21:7)।

दुर्भाग्यवश, कुछ आधुनिक सेवकों ने गैर-बाइबल संबन्धी सिद्धान्तों को अपनाते हुए शिष्य निर्माण के लक्ष्य को हानि पहुंचाई है। इस तरह का एक सिद्धान्त जो संयुक्त राष्ट्र में अधिक प्रचलित है वह *बिना किसी शर्त की अनन्त सुरक्षा* है, या ''एक बार बचाए जाने के पश्चात् हमेशा के लिए बचा लिये गए।'' इस सिद्धान्त के अनुसार नया जन्म पाए लोग कैसा भी जीवन क्यों न व्यतीत करें, उनका कहना है कि चूंकि उद्धार अनुग्रह से है अत: वही अनुग्रह जो उद्धार प्राप्त करने हेतु प्रार्थना करने वाले लोगों को आरम्भ में बचाता है वही उन्हें आगे भी बचाए रखेगा। एक दूसरा दृष्टिकोण, जिसे वे बनाए रखते हैं वह यह कहने के समान है कि लोग अपने कार्यों से उद्धार पाते हैं।

स्वभाविक है कि इस तरह का दृष्टिकोण पवित्रता की बड़ी निश्चितता है। क्योंकि मसीह के प्रति आज्ञाकारिता स्वर्ग में प्रवेश करने के लिए ज़रूरी नहीं है, अत: यीशु का आज्ञापालन करने में कम प्रेरणा पाई जाती है विशेषकर उस समय में जब कि आज्ञाकारिता कीमती हो।

जैसा मैंने इस पुस्तक में पहले भी कहा कि परमेश्वर जिस अनुग्रह को मानवता की ओर बढ़ाता है वह लोगों को परमेश्वर की आज्ञा का पालन करने के उत्तरदायित्व से छुटकारा नहीं दे देता है। पवित्रशास्त्र बताता है कि उद्धार केवल अनुग्रह ही से नहीं है, बल्कि विश्वास से भी है (देखें इफि. 2:8)। उद्धार के लिए विश्वास और अनुग्रह दोनों ही ज़रूरी हैं। विश्वास परमेश्वर के अनुग्रह के प्रति एक उपयुक्त प्रतिक्रिया है और सच्चे विश्वास का परिणाम सदैव पश्चात्ताप और आज्ञाकारिता में होता है। याकूब के अनुसार कर्म बिना विश्वास मृत व बेकार है और यह बचा नहीं सकता (देखें याकूब 2:14-26)।

इसी कारण पवित्रशास्त्र बार बार कहता है कि जारी रहने वाला उद्धार जारी रहने वाले विश्वास और आज्ञाकारिता पर निर्भर करता है। ऐसे बहुत से पवित्रशास्त्र के पद हैं जो इसे स्पष्ट करते हैं। उदाहरण के लिये, पौलुस कुलुस्सियों के विश्वासियों को अपने पत्र में कहता है;

> और उसने अब उसकी शारीरिक देह में मृत्यु के द्वारा तुम्हारा भी मेल कर लिया जो पहले निकाले हुए थे और बुरे कामों के कारण मन से बैरी थे। ताकि तुम्हें अपने सम्मुख पवित्र और निष्कलंक और निर्दोष बनाकर उपस्थित करे। *यदि तुम विश्वास की नेव पर दृढ़ बने रहो, और उस सुसमाचार की आशा को जिसे तुम ने सुना है न छोड़ो,* जिसका प्रचार आकाश के नीचे की सारी सृष्टि में किया गया, (कुलु. 1:21-23, पर बल दिया गया है)।

यह स्पष्ट नहीं हो सका है। केवल एक दार्शनिक ही पौलुस के अर्थ को घुमा सकता या उस पर गलती कर सकता है। *यदि* हम विश्वास में बने रहें तो यीशु हमें निर्दोष ठहराता है। इसी सत्य को रोमि. 11:13-24, 1 कुरि. 15:1-2 और इब्रा. 3:12-14; 10:38-39 में दोहराया गया है, जहां यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि विश्वास में बने रहने पर उद्धार अनिश्चित है। सभी के साथ *यदि* शब्द पाया जाता है।

पवित्रता की अत्यावश्यकता

The Necessity of Holiness

क्या एक विश्वासी पाप करने के द्वारा अनन्त जीवन से वंचित हो सकता है? इसका जवाब पवित्रशास्त्र के कई पदों में मिलता है, जिनमें से कुछ नीचे दिये गए हैं, जो इस बात की गारंटी देते हैं कि भिन्न तरह के पापों को करने वाले परमेश्वर के राज्य के अधिकारी नहीं होंगे। यदि एक विश्वासी पौलुस द्वारा दी गई निम्नलिखित पापों की सूची की ओर लौटता है तो वह उद्धार से वंचित हो सकता है:

> क्या तुम नहीं जानते कि अन्यायी लोग परमेश्वर के राज्य के वारिस

> न होंगे? धोखा न खाओ, न *वेश्यागामी*, न *मूर्तिपूजक*, न *परस्त्रीगामी*, न *लुच्चे*, न *पुरुषगामी*, न *चोर*, न *लोभी*, न *पियक्कड़*, न *गाली देनेवाले*, न *अन्धेर करनवाले* परमेश्वर के राज्य के वारिस होंगे (1 कुरि. 6:9-10, पर बल दिया गया है)।
>
> शरीर के काम तो प्रगट हैं; अर्थात् *व्यभिचार, गन्दे काम, लुचपन, मूर्तिपूजा, टोना, बैर, झगड़ा, ईर्ष्या, क्रोध, विरोध, फूट, विधर्म, डाह, मतवालापन, लीलाक्रीड़ा, और इन के ऐसे और और काम हैं*, इनके विषय में मैं तुम को पहले से कह देता हूं जैसा पहले कह भी चुका हूं, कि ऐसे ऐसे काम करनेवाले परमेश्वर के राज्य के वारिस न होंगे (गल. 5:19-21, पर बल दिया गया है)।
>
> क्योंकि तुम यह जानते हो, कि किसी *व्यभिचारी* या *अशुद्ध* जन, या *लोभी* मनुष्य की, जो एक मूरत पूजनेवाले के बराबर है, मसीह और परमेश्वर के राज्य में मीरास नहीं। कोई तुम्हें व्यर्थ बातों से धोखा न दे; क्योंकि इन ही कामों के कारण परमेश्वर का क्रोध आज्ञा न माननेवालों पर भड़कता है (इफि. 5:5-6, पर बल दिया गया है)।

ध्यान दें कि प्रत्येक मामले में पौलुस विश्वासियों को चेतावनी देते हुए सिखा रहा था। दो बार उसने उन्हें धोखा न खाने के बारे में चिताया जो इस बात का संकेत देता है कि कुछ विश्वासी सोच सकते हैं कि उसके द्वारा दी जाने वाली पापों की सूची को करते हुए भी वे परमेश्वर के राज्य के अधिकारी हो सकते हैं।

यीशु ने अपने घनिष्ठ शिष्यों-पतरस, याकूब, यूहन्ना और अन्द्रियास को इस कारण से उनके नरक में डाले जाने की संभावना के बारे में चिताया, यदि वे उसकी वापसी पर तैयार न पाए जाएं। ध्यान दें कि निम्नलिखित शब्द उनसे कहे गए थे (देखें मर. 13: 1-4) न कि अविश्वासियों की भीड़ :

> इसलिये जागते रहो, क्योंकि तुम नहीं जानते कि *तुम्हारा प्रभु* किस दिन आएगा। परन्तु यह जान लो कि यदि घर का स्वामी जानता होता कि चोर किस पहर आएगा, तो जागता रहता; और अपने घर में सेंध लगाने न देता। इसलिये *तुम* (पतरस, याकूब, यूहन्ना और अन्द्रियास) भी तैयार रहो, क्योंकि जिस घड़ी के विषय में *तुम* सोचते भी नहीं हो, उसी घड़ी मनुष्य का पुत्र आ जाएगा।

> सो वह विश्वासयोग्य और बुद्धिमान दास कौन है, जिसे स्वामी ने अपने नौकर चाकरों पर सरदार ठहराया, कि समय पर उन्हें भोजन दे? धन्य है, वह दास, जिसे उसका स्वामी आकर ऐसा ही करता पाए। मैं तुम से सच कहता हूं; वह उसे अपनी सारी संपत्ति पर सरदार ठहराएगा। परन्तु यदि वह दुष्ट दास सोचने लगे, कि मेरे स्वामी के आने में देर है। और अपने साथी दासों को पीटने लगे, और पियक्कड़ों के साथ खाए पीए। तो उस दास का स्वामी ऐसे दिन आएगा, जब वह उसकी बाट न जोहता हो। और ऐसी घड़ी कि वह न जानता हो, और उसे भारी ताड़ना देकर, उसका भाग कपटियों के साथ ठहराएगा : वहां रोना और दांत पीसना होगा (मत्ती 24:42-51 पर अतिरिक्त बल)।

कहानी की शिक्षा क्या है? ''पतरस, याकूब, यूहन्ना और अन्द्रियास को इस दृष्टांत के अविश्वासयोग्य सेवक के समान नहीं बनना है।''[29]

अपने घनिष्ठ शिष्यों से यीशु ने जो कुछ कहा उसे अधोरेखित करने के लिए वह इसके बाद ही उन्हें दस कुंवारियों का दृष्टांत बताता है। सभी दसों कुंवारियां आरम्भ में दुल्हे के आगमन के लिए तैयार थीं लेकिन बाद में पांच तैयार न रहीं जिस कारण वे विवाह भोज में शामिल न हो सकीं। यीशु ने दृष्टांत का समापन इन शब्दों से किया, 'इसलिये जागते रहो, क्योंकि *तुम* (पतरस, याकूब, यहून्ना और अन्द्रियास) न उस दिन को जानते हो, न उस घड़ी को।' (मत्ती 25:13)। यदि परतस, याकूब, यूहन्ना और अन्द्रियास के तैयार न पाए जाने की संभावना न होती तो यीशु को उन्हें चेतावनी देने की ज़रूरत न होती।

यीशु ने इसके बाद ही उन्हें तोड़ों का दृष्टांत सुनाया। इसमें फिर से वही संदेश था। ''इस एक तोड़े वाले सवेक के समान न बनो जिसके के पास उसे दिखाने के सिवाय और कुछ नहीं था जो उसके स्वामी ने उसे सौंपा था।'' दृष्टांत के अन्त में, स्वामी ने घोषित किया, ''इस निकम्मे दास को बाहर के अन्धेरे में डाल दो, जहां रोना और दांत पीसना होगा'' (मत्ती 25:30)। यीशु अपने संदेश को स्पष्ट नहीं कर सका था। केवल एक थियोलोजियन ही उसके अर्थ को घुमा सकता है। पतरस, याकूब, यहून्ना और अन्द्रियास के लिए अन्त में नरक में डाले जाने का खतरा हो सकता है यदि वे यीशु की वापसी तक आज्ञाकारी न रहें। यदि इसकी संभावना पतरस, याकूब, यूहन्ना और अन्द्रियास के लिए थी तो यह हमारे लिये भी हो सकती है। यीशु की

29. अद्‌भुत रूप में, कुछ शिक्षक, जो इस सच्चाई से बच नहीं सकते जिसके बारे में यीशु अविश्वासयोग्य सेवक स्पष्ट रूप से प्रगट करता है। जो कि एक विश्वासी था, उनका कहना है कि रोने और दोतों के किटकिटाने का स्थान स्वर्ग की सीमा पर ही है। अत: अविश्वासयोग्य विश्वासी अस्थायी रूप से ही वहां अपनी हानि का दुख उठाएंगी, जब तक कि यीशु उनकी आंखों से आसूं पोंछकर उनका स्वर्ग में स्वागत न करे।

प्रतिज्ञानुसार, उसकी चिंता की इच्छा को पूरा करने वाले ही स्वर्ग के राज्य में प्रवेश कर पाएंगे (देखें मत्ती 7:21)।[30]

बिना किसी शर्त अनन्त सुरक्षा के झूठे सिद्धान्त की शिक्षा देने वाले मसीह के विरोधी और शैतान के सहकर्मी हैं, जो उसके विपरीत शिक्षा देते हैं जो यीशु और प्रेरितों ने सिखाया था। वह यीशु की उन लोगों को शिष्य बनाने की आज्ञा को निष्प्रभावित कर देते हैं जो उसकी सभी आज्ञाओं को मानेंगे, ऐसा करते हुए वे स्वर्ग की ओर, जानेवाले मार्ग को सकरा करते हैं तथा नरक की ओर जाने वाले मार्ग को और भी चौड़ा कर देते हैं।[31]

शिष्य निर्माण को परास्त करने वाला अन्य आधुनिक सिद्धांत

Another Modern Doctrine that Defeats Disciple-Making

केवल बिना शर्त अनन्त सुरक्षा की शिक्षा ही लोगों को यह धोखा नहीं देती है कि उद्धार पाने के लिए पवित्रता की आवश्यकता नहीं है। परमेश्वर के प्रेम को प्राय: इस तरह से प्रस्तुत किया जाता है जो शिष्य निर्माण को निष्प्रभावी कर देता है। प्रचारकों को अक्सर अपने श्रोताओं से यह कहते हुए सुना जा सकता है, ''परमेश्वर आपसे बिना किसी शर्त के प्रेम करता है।'' लोग इसका अर्थ इस तरह से निकालते हैं, ''मेरे आज्ञा मानने या न मानने पर भी परमेश्वर मुझे स्वीकार करता और सही ठहराता है।'' जो सच नहीं है।

---

30. बेशक, एकमात्र पाप करनेवाले मसीही अपने उद्धार से वंचित नहीं हो जाते। अपने पापों की क्षमा मांगने वालों को परमेश्वर द्वारा क्षमा किया जाता है (यदि वे अपने विरुद्ध पाप करने वालों को क्षमा करते हैं) परमेश्वर से क्षमा न मांगनेवाले स्वयं को परमेश्वर द्वारा अनुशासित किये जाने के खतरे में रखते हैं। परमेश्वर के अनुशासन में रहते हुए भी स्वयं के मनों को कठोर करते हुए ही वे उद्धार से वंचित होने के खतरे में पड़ सकते हैं।

31. जिन्होंने अभी तक यह स्वीकार नहीं किया है कि एक मसीही अपने उद्धार से वंचित हो सकता है उन्हें निम्नलिखित नये नियम के परिच्छेदों पर विचार करना चाहिए; मत्ती. 18:21-35; 24:4-5, 11-13, 23-26, 42-51; 25:1-30; लूका 8:11-15; 11:24-28; 12:42-46; यूह. 6:66-71; 8:31-32, 51; 15:1-6; प्रेरित. 11:21-23; 14:21-22; रोमि. 6:11-23; 8:12-14, 17; 11:20-22; 1 कुरि. 9:23-27; 10:1-21; 11:29-32; 15:1-2; 2 कुरि. 1:24; 11:2-4; 12:21-13:5; गल. 5:1-4; 6:7-9; फिलि. 2:12-16; 3:17-4:1; कुलु. 1:21-23; 2:4-8, 18-19; 1 थिस्स. 3:1-8; 1 तीमु. 1:3-7, 18-20; 4:1-16; 5:5-6, 11-15, 6:9-12, 17-19, 20-21; 2 तीमु. 2:11-18; 3:13-15; इब्रा. 2:1-3; 3:6-19; 4:1-16; 5:8-9; 6:4-9, 10-20; 10:19-39; 12:1-17, 25-29; याकू. 1:12-16; 4:4-10; 5:19-20; 2 पत. 1:5-11; 2:1-22; 3:16-17; 1 यूह. 2:15-2:28; 5:16; 2 यूह. 6-9; यहूदा 1:20-21; प्रका. 2:7, 10-11, 17-26; 3:4-5, 8-12, 14-22; 21:7-8; 22:18-19। प्रमाणित संदर्भ उनके द्वारा दिये गए हैं जो बिनाशर्त अनन्त सुरक्षा के सिद्धान्त की शिक्षा देते है ये वे धर्मशास्त्रीय पद हैं जो उद्धार में परमेश्वर की विश्वासयोग्यता पर बल देते हैं, और मानवीय उत्तरदायित्व के बारे में कुछ नहीं कहते। मेरे द्वारा सूचीगत किए गए अधिकांश धर्मशास्त्रीय पदों से समन्वित करने को उन्हें अनुवादित किया जाना चाहिए। परमेश्वर द्वारा अपनी विश्वासयोग्यता की प्रतिज्ञा दिया जाना किसी भी विश्वासीय फल की गारंटी नहीं है। चूंकि मैंने अपनी पत्नी से प्रतिज्ञा की है कि मैं उसे कभी नहीं छोड़ूंगा और अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करूंगा तो इसका अर्थ यह नहीं हो जाता कि वह मुझे कभी नहीं छोड़ेगी।

इसी तरह के बहुत से प्रचारकों का यह मानना है कि परमेश्वर नया जन्म न पाए लोगों को नरक में डालता है, और निश्चय ही उनका सोचना सही भी है। आइये अब इस पर विचार करें। *निस्संदेह*, परमेश्वर जिन लोगों को नरक में डालता है उन्हें वह सही नहीं ठहराता। तो यह कैसे कहा जा सकता है कि वह उनसे प्रेम करता है? जिन लोगों को परमेश्वर ने नरक में डाला है क्या वह उनसे प्रेम करता है? क्या आप यह सोचते हैं कि वे आपको यह बताएंगे कि परमेश्वर उनसे प्रेम करता है? निश्चय ही नहीं! वे उसके लिए घृणित हैं, इसी कारण वह उन्हें नरक का दण्ड दे रहा है। वह उनसे न तो प्रेम करता और न ही उन्हें सही ठहराता है।

अत:, परमेश्वर का प्रेम सांसारिक पापियों के लिए एक *करुणामयी प्रेम* है जो अस्थायी है, न कि *सही ठहराए जाने वाला प्रेम।* वह उन पर करुणा करते हुए अपने न्याय को उन पर लाने से पहले उन्हें पश्चात्ताप करने का अवसर देता है। यीशु उनके लिए क्षमा के मार्ग को तैयार करते हुए मारा गया। अत: इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि परमेश्वर उनसे प्रेम करता है। लेकिन वह उन्हें कभी *सही नहीं ठहराता।* वह कभी भी उनके प्रति उस प्रेम का अनुभव नहीं करता जैसा एक पिता अपने बच्चे के लिए करता है। इसके विपरीत, पवित्रशास्त्र कहता है, ''जैसे पिता अपने बालकों पर दया करता है, वैसे ही यहोवा अपने *डरवैयों* पर दया करता है'' (भजन संहिता 10:3-13 अतिरिक्त बल)। अत: यह कहा जा सकता है कि जो परमेश्वर का भय *नहीं मानते* उन पर उसकी यह दया *नहीं* होती। परमेश्वर का प्रेम एक पापी के प्रति उस करुणा करने वाले न्यायी के समान है जो एक हत्यारे को मृत्युदण्ड की बजाय आजीवन कारावास की सज़ा देता है।

प्रेरितों के काम की पुस्तक में ऐसा कोई भी मामला नहीं मिलता जहां सुसमाचार का प्रचार करने वाले ने उद्धार न पाए श्रोता से यह कहा हो कि परमेश्वर उससे प्रेम करता है। इसके विपरीत, बाइबल प्रचारकों ने सदैव अपने श्रोताओं को परमेश्वर के क्रोध के बारे में चिताते हुए उन्हें पश्चात्ताप करने को कहा, उन्हें यह बताते हुए कि परमेश्वर उन्हें *सही नहीं ठहराता, कि* वे खतरे में हैं, और यह कि उन्हें अपने जीवनों में परिवर्तन करने की ज़रूरत है। यदि उन्होंने अपने श्रोताओं को केवल यही बताया होता कि परमेश्वर उनसे प्रेम करता है जैसा आज बहुत से आधुनिक सेवक कहते हैं, तो ऐसा करके संभवत: उन्होंने अपने श्रोताओं का गलत नेतृत्व किया होता, यह सोचने में कि वे खतरे में नहीं हैं, कि वह अपने लिए क्रोध को अर्जित नहीं कर रहे हैं और यह कि उन्हें पश्चात्ताप करने की ज़रूरत नहीं है।

पापियों के प्रति परमेश्वर की घृणा
God's Hatred of Sinners

आज पापियों के प्रति परमेश्वर के प्रेम के बारे में जो कुछ भी कहा जाता है उसके

प्रतिकूल पवित्रशास्त्र प्राय: कहता है कि परमेश्वर पापियों से *घृणा* करता है :

> घमण्डी तेरे सम्मुख खड़े होने न पाएंगे, *तुझे सब अनर्थकारियों से घृणा है।* तू जो झूठ बोलते हैं नाश करेगा; यहोवा तो हत्यारे और छली मनुष्य से *घृणा* करता है। (भजन. 5:5-6, पर बल दिया गया है)।
>
> यहोवा धर्मी को परखता है, परन्तु वह उन से जो दुष्ट हैं और उपद्रव से प्रीति रखते हैं अपनी आत्मा से *घृणा* करता है। (भजन. 11:5 पर बल दिया गया है)।
>
> मैंने अपना घर छोड़ दिया, अपना निज भाग मैंने त्याग दिया है; मैंने अपनी प्राणप्रिया को शत्रुओं के वश में कर दिया है। क्योंकि मेरा निज भाग मेरे देखने में वन के सिंह के समान हो गया और वह मेरे विरुद्ध गरजा है; इस कारण *मैंने उससे बैर किया है* (यिर्म. 12:7-8, पर बल दिया गया है)।
>
> उनकी सारी बुराई गिलगाल में है; *वहीं मैंने उनसे घृणा की।* उनके बुरे कामों के कारण मैं उनको अपने घर से निकाल दूंगा। और *उनसे फिर प्रीति न रखूंगा,* क्योंकि उनके सब हाकिम बलवा करने वाले हैं (होशे 9:15, पर बल दिया गया है)।

ध्यान दें कि उपरोक्त में से कोई भी पवित्रशास्त्रीय पद यह नहीं कहता कि लोग जो *करते* हैं परमेश्वर केवल उससे घृणा करता है-बल्कि यह कि वह *उनसे* घृणा करता है। यह इस सामान्य ठप्पे पर प्रकाश डालता है कि परमेश्वर पापियों से प्रेम करता है लेकिन पाप से घृणा करता है। हम एक व्यक्ति को उसके द्वारा किये जाने वाले कार्य से अलग नहीं कर सकते। *उसके कार्य प्रगट करते हैं कि वह कैसा है।* अत: परमेश्वर पाप करनेवाले लोगों से घृणा करता है, न कि केवल लोगों द्वारा किये जाने वाले पाप से। यदि परमेश्वर उन लोगों को सही ठहराता है जो वह करते हैं जिससे उसे घृणा है, तो वह स्वयं अपने ही विरोध में है। मानवीय न्यायालयों में, *लोगों* के अपराध के कारण उनकी जांच की जाती है, और उन्हें हरजाना देना पड़ता है।

वे लोग जिनसे परमेश्वर घृणा करता है

People Whom God Abhors

पवित्रशास्त्र केवल इस बात की ही पुष्टि नहीं करता कि परमेश्वर कुछ विशिष्ट व्यक्तियों से घृणा करता है, बल्कि यह भी बताता है कि परमेश्वर कुछ पापी प्रवृत्ति के लोगों से भी घृणा करता है और यह कि वे उसके लिए घृणित हैं। एक बार फिर से ध्यान दें कि निम्नलिखित पवित्रशास्त्र के उद्धरण यह नहीं कहते कि इन लोगों

द्वारा किये जाने वाले *कार्य* परमेश्वर के लिए घृणित हैं, बल्कि यह कि *वे स्वयं,* परमेश्वर के लिए घृणित हैं। ये पद यह नहीं कहते कि परमेश्वर उनके *पापों* से घृणा करता है, बल्कि यह कि परमेश्वर *उनसे* घृणा करता है।[32]

> कोई स्त्री पुरुष का पहिरावा न पहने, और न कोई पुरुष स्त्री का पहिरावा पहने; क्योंकि ऐसे कामों के सब करने वाले तेरे परमेश्वर यहोवा की दृष्टि में *घृणित* हैं (व्यवस्था. 22:5, पर बल दिया गया है)।
>
> क्योंकि ऐसे कामों में जितने कुटिलता करते हैं वे सब तेरे परमेश्वर यहोवा की दृष्टि में *घृणित* हैं (व्यवस्था. 25:16; पर बल दिया गया है)।
>
> और तुम को अपने बेटों और बेटियों का मांस खाना पड़ेगा। और मैं तुम्हारे पूजा के ऊंचे स्थानों को ढा दूंगा और तुम्हारे सूर्य की प्रतिमाएं तोड़ डालूंगा, और तुम्हारी लोथों को तुम्हारी तोड़ी हुई मूरतों पर फेंक दूंगा, और मेरी आत्मा को तुम से *घृणा* हो जाएगी (लैव्य. 26:29-30, पर बल दिया गया है)।
>
> घमंडी तेरे सम्मुख खड़े होने न पाएंगे; तुझे सब अनर्थकारियों से घृणा है। तू उनको जो झूठ बोलते हैं नाश करेगा; यहोवा तो हत्यारे और छली मनुष्य से *घृणा* करता है (भजन. 5:5, पर बल दिया गया है)।
>
> क्योंकि यहोवा कुटिल से *घृणा* करता है, परन्तु वह अपना भेद सीधे लोगों पर खोलता है (नीति. 3:32, पर बल दिया गया है)।
>
> जो मन के टेढ़े हैं, उन से यहोवा को *घृणा* आती है, परन्तु वह खरी चाल वालों से प्रसन्न रहता है (नीति. 11:20, पर बल दिया गया है)।
>
> सब मन के घमण्डियों से यहोवा *घृणा* करता है; मैं दृढ़ता से कहता हूं, ऐसे लोग निर्दोष न ठहरेंगे (नीति. 16:5, पर बल दिया गया है)।
>
> जो दोषी को निर्दोष, और जो निर्दोष को दोषी ठहराता है, उन

32. यह तर्क दिया जा सकता है कि परमेश्वर की घृणा को दिखाने वाले ये सभी पद पुराने नियम से लिये गए हैं। तथापि, पुराने नियम से लेकर नये नियम तक परमेश्वर का रवैया पापियों के प्रति बदला नहीं है। मत्ती 15:22-28 में यीशु का एक कनानी स्त्री से सामना नये नियम में पापियों के प्रति परमेश्वर के रवैये का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। सर्वप्रथम तो यीशु ने उसके निवेदन का कोई जवाब नहीं दिया, और उसने उसे कुत्ते के रूप में भी संबोधित किया। उसके अटूट विश्वास के कारण ही उसने उस पर कुछ करुणा प्रगट की। शास्त्रियों और फरीसियों के प्रति यीशु का व्यवहार सही ठहराने वाले प्रेम के रूप में कठिनाई से ही विचारणीय है (देखें मत्ती 23)।

दोनों से यहोवा *घृणा* करता है (नीति. 17:15, पर बल दिया गया है)।

हमें इन पवित्रशास्त्रीय पदों का मेल उनके साथ कैसे करना है जो पापियों के लिए परमेश्वर के प्रेम की पुष्टि करते हैं? यह कैसे कहा जा सकता है कि परमेश्वर पापियों से घृणा करता है, परन्तु यह भी कि वह उनसे प्रेम भी करता है।

यह जानना ज़रूरी है कि सभी प्रेम एक समान नहीं हैं। कुछ प्रेम में शर्त नहीं होती। इसे 'करुणापूर्ण प्रेम' कहा जा सकता है। इस तरह के प्रेम में इस तरह से कहा जाता है कि ''मैं इसके बावजूद तुमसे प्रेम करता हूं।'' इसमें लोगों को उनके कार्यों से हटकर प्रेम किया जाता है। इस तरह का प्रेम परमेश्वर पापियों के लिए रखता है।

करूणापूर्ण प्रेम की तलुना *शर्तबन्द प्रेम* से करें। इसका उल्लेख *''सही ठहराए जाने वाले प्रेम''* के रूप में किया जा सकता है। यह ऐसा प्रेम है जिसे अर्जित किया जाता है। इस तरह का प्रेम कहता है कि, ''इस कारण मैं तुमसे प्रेम करता हूं।''

कुछ के विचार से प्रेम के सशर्त होने पर यह प्रेम नहीं कहलाता है। और वे यह कहते हुए इस तरह के प्रेम को छोटा करते हैं कि यह पूर्णतया स्वार्थी है और परमेश्वर के प्रेम के प्रतिकूल है।

तौभी सच्चाई यह है कि परमेश्वर सशर्त प्रेम से प्रेरित है। जिसे हम जल्द ही पवित्रशास्त्र में देखेंगे। अत:, *सही ठहराने वाले प्रेम* का तिरस्कार नहीं करना चाहिए। *सही ठहराने वाला प्रेम* एक प्राथमिक प्रेम है जो परमेश्वर में अपनी सच्ची संतानों के लिये है। हमें परमेश्वर के *करुणापूर्ण प्रेम* को प्राप्त करने की तुलना में *सही ठहराने वाले प्रेम* को प्राप्त करने की इच्छा अधिक करनी चाहिए।

क्या सही ठहराने वाला प्रेम निम्न कोटि का प्रेम है?

Is Approving Love an Inferior Love?

रुककर स्वयं से यह प्रश्न करें :''लोगों में आप के लिए कौन सा प्रेम होना चाहिए? *करुणापूर्ण प्रेम* या *सही ठहरानेवाला प्रेम?''* मुझे निश्चय है कि आप अपने लिए लोगों से ''इसके बावजूद'' प्रेम के बजाय ''इस कारण'' प्रेम को चाहेंगे।

क्या आपने कभी किसी पति या पत्नी को इस तरह से कहते हुए सुना है, ''मेरे पास तुम्हें प्रेम करने का कोई कारण नहीं, तुममें ऐसा कुछ भी नहीं है जिस कारण मैं तुम से प्रेम करने को प्रेरित होऊं'' या ''मैं तुम्हें कई कारणों से प्रेम करता हूं, क्योंकि तुममें सराहना करने योग्य बहुत सी चीज़ें हैं?'' निश्चय ही हम चाहेंगे कि हमारा पति या पत्नी हमसे *सही ठहराने वाला प्रेम* करे, यह प्राथमिक किस्म का वह प्रेम है जो दम्पत्तियों को एक दूसरे के निकट लाकर उन्हें साथ साथ रखता है। जब अपने पति या पत्नी में सराहना करने योग्य एक व्यक्ति के पास कुछ नहीं होता, जब

सही ठहराने वाला प्रेम रुक जाता है तब कुछ विवाहों का अन्त हो जाता है। यदि वे अन्त तक बने रहते हैं तो इसका श्रेय करुणापूर्ण प्रेम को जाता है, जो उस ईश्वरीय चरित्र की शाखा है जो उस प्रेम का देने वाला है।

अत:, इस तरह से हम यह देखते हैं कि *सही ठहरानेवाला* या *करुणापूर्ण* प्रेम निम्न कोटि के नहीं है। जबकि *'करुणापूर्ण प्रेम' देने वाला* प्रेम होने के कारण अधिक प्रशंसनीय है। इसके अतिरिक्त, यह सत्य है कि *सही ठहराने वाला प्रेम* एकमात्र वह प्रेम है जो पिता ने यीशु से रखा और उसे आदर के स्थान पर बैठाया। पिता परमेश्वर में यीशु के लिए एक बूंद भी *करुणापूर्ण प्रेम* की नहीं थी, क्योंकि मसीह में कुछ भी अप्रिय नहीं था। यीशु ने गवाही दी:

> *पिता इसलिये मुझ से प्रेम रखता है, कि मैं अपना प्राण देता हूं,* कि उसे फिर ले लूं (यूह. 10:17, पर बल दिया गया है)।

अत: हम देखते हैं कि पिता ने यीशु से इसलिए प्रेम किया *क्योंकि* वह मरने तक आज्ञाकारी रहा था। *सही ठहरानेवाले प्रेम* में कुछ भी गलत नहीं है और सब कुछ सही है। यीशु ने अपने पिता के प्रेम को अर्जित किया और वह इसके योग्य भी था।

यीशु ने यह भी घोषणा की कि वह अपने पिता की आज्ञाओं को पूरा करने के द्वारा अपने पिता के प्रेम में बना हुआ था :

> जैसा, पिता ने मुझ से प्रेम रखा, वैसा ही मैंने तुम से प्रेम रखा, मेरे प्रेम में बने रहो। यदि तुम मेरी आज्ञाओं को मानोगे तो मेरे प्रेम में बने रहोगे : *जैसा कि मैंने अपने पिता की आज्ञाओं को माना है, और उसके प्रेम में बना रहता हूं* (यूहन्ना 15:9-10, पर बल दिया गया है)।

इसके अतिरिक्त, जैसा यह पद संकेत देता है, हमें यीशु के उदाहरण का अनुसरण करना है और उसकी आज्ञाओं को पूरा करते हुए उसके प्रेम में बने रहना है। वह इस परिच्छेद में स्पष्ट रूप से *सही ठहरानेवाले प्रेम* के बारे में बोल रहा है, हमें यह बताते हुए कि हम इस प्रेम को प्राप्त कर सकते हैं और हमें इसे प्राप्त करना भी चाहिए, और यह कि हम उसकी आज्ञाओं को न मानने के द्वारा स्वयं को उसके प्रेम से अलग कर सकते हैं। *उसकी आज्ञाओं को मानने के द्वारा ही हम उसके प्रेम में बने रहते हैं।* इस तरह की चीज़ को आज बहुत कम ही सिखाया जाता है, लेकिन ऐसा किया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसा ही यीशु ने भी कहा।

यीशु ने परमेश्वर के *सही ठहरानेवाले प्रेम* की पुष्टि उन के लिए भी की जो उसकी आज्ञाओं को मानते हैं।

> क्योंकि *पिता तो आप ही तुमसे प्रीति रखता है, इसलिये कि तुम ने मुझ से प्रीति रखी है,* और यह भी प्रतीति की है, कि मैं पिता की

> ओर से निकल कर आया (यूहन्ना 16:27, पर बल दिया गया है)।
>
> जिसके पास मेरी आज्ञा है और वह उन्हें मानता है वही मुझसे प्रेम रखता है; और *जो मुझ से प्रेम रखता है उससे मेरा पिता प्रेम रखेगा,* और मैं उससे प्रेम रखूंगा, और अपने को उस पर प्रगट करूंगा...*यदि कोई मुझ से प्रेम रखे, तो वह मेरे वचन को मानेगा, और मेरा पिता उससे प्रेम रखेगा,* और हम उसके पास आएंगे, और उसके साथ वास करेंगे (यूहन्ना 14:21, 23, पर बल दिया गया है)।

दूसरे उद्धरण में ध्यान दें कि यीशु असमर्पित विश्वासियों से ऐसी कोई प्रतिज्ञा नहीं कर रहा था कि यदि वे उसकी आज्ञा मानना आरम्भ करेंगे तो वे एक विशिष्ट तरीके से उनके निकट आएगा। नहीं, यीशु यह प्रतिज्ञा कर रहा था कि यदि कोई उससे प्रेम करना और उसकी आज्ञाओं को मानना आरम्भ करेगा तो उसका पिता भी उस व्यक्ति से प्रेम करेगा, और वह तथा उसका पिता दोनों उस व्यक्ति में रहने के लिए आएंगे, जोकि नया जन्म पाने का एक स्पष्ट उल्लेख है। हर कोई जिसका नया जन्म हुआ है उसमें पवित्र आत्मा के वास करने के द्वारा पिता और पुत्र दोनों रहते हैं (देखें रोमि. 8:9)। अत:, हम पुन: देखते हैं कि सच में नया जन्म पाए हुए वे हैं जो पश्चात्ताप कर यीशु का आज्ञा पालन करना आरम्भ करते हैं, और केवल वही हैं जो पिता के *सही ठहराने वाले प्रेम* को प्राप्त करते हैं।

बेशक, यीशु ने अपने पर विश्वास रखने वालों के लिये अभी भी *करुणापूर्ण प्रेम* को आरक्षित करके रखा है। उनके आज्ञा उल्लंघन करने पर, यदि वे अपने पापों का अंगीकार कर दूसरों को क्षमा करने को तैयार रहते हैं तो वह भी उन्हें क्षमा करने को तैयार रहता है।

निष्कर्ष

The Conclusion

अत:, यह कहा जा सकता है कि परमेश्वर जिस तरह से पापियों से प्रेम करता है उसी तरह से वह अपनी आज्ञाकारी संतानों से प्रेम नहीं करता है। वह पापियों से केवल *करुणापूर्ण प्रेम* करता है, और यह प्रेम अस्थायी है, उनकी मृत्यु तक। उन्हें *करुणापूर्ण प्रेम* करते हुए, वह उनके चालचलन के कारण उनसे घृणा भी करता है। पवित्रशास्त्र इस बारे में यही सिखाता है।

दूसरी ओर, परमेश्वर अपनी संतानों से उनकी तुलना में अधिक प्रेम करता है जिनका नया जन्म नहीं हुआ होता। क्योंकि वे पश्चात्ताप करते तथा उसकी आज्ञाओं को मानने का प्रयास करते हैं। अत: वह उनसे *सही ठहरानेवाला* प्रेम करता है। उनके पवित्रता में बढ़ने पर, उसके पास उनसे *करुणापूर्ण प्रेम* करने का कम से कम कारण रह जाता

है, और उनसे *सही ठहरानेवाला प्रेम* करने का कारण अधिक से अधिक होता है, जिसकी वे इच्छा भी करते हैं।

आधुनिक प्रचारकों और शिक्षकों द्वारा परमेश्वर के प्रेम के अधिकांश चित्रण गलत और भ्रमित करने वाले हैं। पवित्रशास्त्र जो कुछ इस बारे में कहता है उस पर परमेश्वर से प्रेम के बारे में निम्नलिखित परिचित कथनों का मूल्यांकन करने के लिए कुछ समय लें :

(1) आप परमेश्वर से आपको अधिक या कम प्रेम करने के लिए कुछ नहीं कर सकते हैं।

(2) आप ऐसा कुछ भी नहीं कर सकते हैं कि परमेश्वर आपको प्रेम करना छोड़ दे।

(3) परमेश्वर का प्रेम बिना-शर्त है।

(4) परमेश्वर प्रत्येक से एक समान प्रेम करता है।

(5) परमेश्वर पापी से प्रेम करता है लेकिन वह पाप से घृणा करता है।

(6) परमेश्वर के प्रेम को प्राप्त करने या स्वयं को उसके योग्य बनाने के लिए आप कुछ नहीं कर सकते हैं।

(7) परमेश्वर का प्रेम हमारे प्रदर्शन पर आधारित नहीं है।

उपरोक्त सभी कथन भ्रमित करने वाले या झूठे हैं, क्योंकि अधिकांश लोग परमेश्वर के *सही ठहराने वाले प्रेम* का इन्कार करते हुए अधिकतर उसके *करुणापूर्ण प्रेम* को प्रस्तुत करते हैं।

(1) के संबन्ध में, विश्वासी ऐसा कुछ कर सकते हैं जिससे परमेश्वर उन्हें *सही ठहराते हुए प्रेम करे :* वे अधिक आज्ञाकारी हो सकते हैं। और वे परमेश्वर के *सही ठहराने वाले प्रेम* को कम करने के लिए भी कुछ कर सकते हैं: अनाज्ञाकारिता। पापी के लिए भी कुछ करने को ऐसा है जिससे परमेश्वर उनसे प्रेम कर सके, वह *पश्चात्ताप* है। तब वे परमेश्वर के *सही ठहरानेवाले प्रेम* को प्राप्त कर पाएंगे। और वे ऐसा कुछ भी कर सकते हैं जिससे परमेश्वर उनसे कम प्रेम करें मर-कर। तब वे परमेश्वर के उस प्रेम को खो देंगे जो उसके पास उनके लिए है—*करुणापूर्ण प्रेम।*

(2) के संबन्ध में, एक मसीही पाप में वापस लौटकर स्वयं को परमेश्वर के *सही ठहरानेवाले प्रेम* से वंचित कर सकता है, परमेश्वर के *करुणापूर्ण प्रेम* के अनुभव में अपने आप को रखते हुए। और पुन: एक अविश्वासी मर सकता है, और यह परमेश्वर के *करुणापूर्ण प्रेम* को रोक देगा, एकमात्र वह प्रेम जो परमेश्वर के पास उसके लिए था।

(3) के संबन्ध में, परमेश्वर का *सही ठहरानेवाला प्रेम* निश्चय ही सशर्त है। और उसका *करुणापूर्ण प्रेम* भी एक व्यक्ति को शारीरिक रूप से जीवित रहने के समय तक सशर्त है। मृत्यु पश्चात्, परमेश्वर के *करुणापूर्ण प्रेम* का अन्त हो जाता है। अत: अस्थायी होने के कारण यह शर्तबन्द है।

(4) के संबन्ध में, परमेश्वर किसी को भी एक समान प्रेम नहीं करता, क्योंकि सभी चाहे पापी हों या धर्मी-भिन्न हैं, वह भिन्न श्रेणियों के आधार पर स्वीकार या अस्वीकार करता है। निश्चय ही यह सत्य है कि परमेश्वर का प्रेम धर्मियों और पापियों के लिए एक समान नहीं है।

(5) के संबन्ध में, परमेश्वर पापियों से *और* उनके पापों से घृणा करता है। यह कहना सही होगा कि वह *करुणापूर्ण प्रेम* से पापियों से प्रेम करता है और उनके पापों से घृणा करता है। उसके *सही ठहराने वाले प्रेम* के एक दृष्टिकोण से वह उनसे घृणा करता है।

(6) के संबन्ध में, हर कोई परमेश्वर के *सही ठहरानेवाले प्रेम* को अर्जित कर सकता है और उसे वह अर्जित करना भी चाहिए। निस्संदेह, कोई भी उसके *'करुणापूर्ण प्रेम'* को अर्जित नहीं कर सकता है, क्योंकि यह बिना-शर्त है।

अनन्त: (7) के संबन्ध में, परमेश्वर का *करुणापूर्ण प्रेम* प्रदर्शन पर आधारित नहीं है, लेकिन परमेश्वर का *सही ठहराने वाला प्रेम* निश्चय ही है।

अत:, यह कहा जा सकता है कि शिष्य-निर्माण करने वाले सेवक को परमेश्वर के प्रेम को सही तरह से प्रस्तुत करना चाहिए, क्योंकि वह नहीं चाहता कि किसी को भी धोखा मिले। जिन लोगों से परमेश्वर *सही ठहराने वाला प्रेम* करता है वह स्वर्ग में प्रवेश करते हैं, और परमेश्वर उनसे ही यह प्रेम करता है जिनका जन्म हो चुका होता है या जो यीशु की आज्ञाओं का पालन करते हैं। शिष्य-निर्माता को किसी ऐसी चीज़ की शिक्षा नहीं देनी चाहिए जो लोगों को पवित्रता से दूर ले जाने वाली हो। उसका लक्ष्य परमेश्वर के लक्ष्य के समान ही हो-मसीह की आज्ञाओं का पालन करने वाले शिष्यों का निर्माण करना।